ज्ञानमीमांसा और शिक्षा

❑ इसराइल शेफलर

बिना ज्ञान की बात किये शिक्षा की बात करना संभव नहीं है । शिक्षा का एक उद्देश्य बच्चे के ज्ञान में बढ़ोतरी तो सर्वमान्य है। फिर चाहे वह बढ़ोतरी बच्चे को ज्ञान के हस्तान्तरण के द्वारा करना चाहें या फिर उसको स्वयं ज्ञान के निर्माण और खोज की विधि सिखा कर। इसी प्रकार चाहे तथाकथित 'व्यावहारिक ज्ञान' को तरजीह दें या कथित 'किताबी ज्ञान' को । ये दो बहसें हमारे शिक्षा जगत में आम बात हैं। एक ''पूर्व-निर्मित-डिब्बा-बन्द-ज्ञान का हस्तान्तर'' बनाम ''अनुभव-के-आधार-पर-कक्षा-में-ज्ञान-निर्माण''; तथा दो, ''व्यावहारिक-ज्ञान'' बनाम ''पुस्तकीय-ज्ञान'' । दोनों ही बहसों में बेचारे ''ज्ञान'' शब्द को कोई इधर खींचता है और कोई उधर । यह सोचने की फुरसत किसी को भी नहीं होती कि ''ज्ञान'' से आशय क्या है और वह आता कहां से होगा ? शिक्षाक्रम निर्माताओं के लिए ये सवाल और भी महत्वपूर्ण हो जाते हैं। इसराइल शेफलर का यह लेख इन सवालों पर संक्षिप्त पर महत्वपूर्ण बात कहता है, यही इसे यहां देने का सबब है ।

यह लेख शेफलर के अंग्रेजी लेख ''एपिस्टेमोलोजी एण्ड एजुकेशन'' का अनुवाद है । इसराइल शेफलर हावर्ड विश्वविद्यालय में शिक्षा दर्शन के प्रोफेसर एमेरिटस हैं और फिलोसॉफी आफ एजुकेशन रिसर्च सेंटर के निदेशक भी । आपने पिछले तीन दशक से अधिक समय में शिक्षा दर्शन पर कई किताबें एवं लेख लिखे हैं । शेफलर विशेष रूप से ज्ञानमीमांसा, विवेक और शिक्षा पर, और इनके अंतर-संबंधों पर लिखते रहे हैं। शेफलर विवेक एवं शिक्षा में गहरा आपसी संबंध देखते हैं और विवेक के विकास को शिक्षा के प्रमुख उद्देश्यों में से मानते हैं ।

इस लेख का अनुवाद विपाशा अग्निहोत्री ने एक राष्ट्रीय स्तर की स्रोत संवर्धन कार्यशाला के लिए किया था। 'विमर्श' के लिए उस अनुवाद में कुछ फेरबदल किया गया है, मुख्यत: बात को सरल बनाने के लिए। सरल बनाने के प्रयास में कोई त्रुटियां हुई हों तो उनके लिए विपाशा अग्निहोत्री जिम्मेदार नहीं हैं ।

ज्ञान का विकास और संचार शिक्षा के मूल कार्य हैं। ज्ञान का विश्लेषण दर्शन की उस शाखा के दायरे में आता है जिसे हम ज्ञानमीमांसा कहते हैं। एक उपयुक्त शैक्षिक दर्शन को न केवल ज्ञानमीमांसा की समस्याओं को उनके सामान्य रूप में समझाना होता है बल्कि उसकी यह कोशिश रहनी चाहिए कि वह इन समस्याओं को शैक्षिक उदेश्यों एवं शैक्षिक कार्यों के नजरिए से भी देखे।

ज्ञान के तीन दर्शन

अच्छा रहेगा अगर हम अपने विषय की कुछ जटिलताओं का सर्वेक्षण कर लें। हमने बहुत आसानी से कह तो दिया कि ज्ञान का तार्किक विश्लेषण करना ज्ञानमीमांसा का काम है, लेकिन ज्ञान को परिभाषित करना कोई आसान काम नहीं है।

पहली बात तो यह है कि ज्ञान का दायरा बहुत विस्तृत है। इसमें बहुत कुछ शामिल रहता है: चीजों, जगहों, लोगों और विषयों के बारे में जानकारी शामिल है; कई प्रकार के विद्वतापूर्ण कामों में महारत शामिल है; तथ्यों और विश्वासों के बारे में आभासी सत्यों का भण्डार शामिल है; रोजमर्रा के अनुभव और विज्ञान के 'परिवर्तनशील-सत्य' शामिल हैं; और गणित तथा तत्वमीमांसा के 'ध्रुव-सत्य' भी शामिल हैं।

दूसरी बात यह है कि 'जानने' की अवधारणा कई अन्य आधार-भूत एवं जटिल विचारों से महत्वपूर्ण रूप से जुड़ी हुई है । उदाहरण के लिए इसका बहुत करीबी सम्बन्ध सभ्य जीवन को बनाये रखने एवं समृद्ध करने के लिए प्रकृति को समझने एवं उस पर नियंत्रण पाने की धारणाओं से है । जानने का संबन्ध सोचने, मनन करने, आत्मसात करने व सराहने की धारणाओं से भी है, जो कि अपने आप में मूल्यवान समझी जाती हैं। ये सभ्य जीवन को पाने के तरीके नहीं बल्कि सभ्य जीवन के लक्ष्य हैं। अक्सर शैक्षिक संदर्भों में यह माना जाता है कि ज्ञान दोनों ही धारणाओं को अपने में समेटता है : प्रकृति पर तकनीकी नियंत्रण पाने से संबंधित धारणाऐं व कौशल, जो इन्सान को अब तक हासिल हैं और वे बौद्धिक कलायें और अनुभव जो अपने आप में मूल्यवान हैं। ऐसे संदर्भों में

ज्ञान सम्पूर्ण बौद्धिक परम्परा को इंगित करता है। शिक्षा का कार्य उसे आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाना है।

आखिर में ज्ञान होने की संकल्पना विद्याओं के भंडार अथवा विभिन्न प्रकार के अनुभवों का विवरण मात्र नहीं है। यह हमारे उन आदर्शों, अभिरूचियों और मापदण्डों को दर्शाती है जो बौद्धिक कलाओं के दायरे और समुचित उपयोग के तरीकों को परिभाषित करते हैं। उदाहरण के लिए यह हमारी सत्य और प्रमाण की धारणाओं को दर्शाती है । साथ ही 'ज्ञान होने की संकल्पना' किसी विश्वास के सत्य होने की संभावनाओं के हमारे आकलन को दर्शाती है, कि हम उसे किस हद तक सच मानते हैं । इसके अलावा खोज के विभिन्न तरीकों में से चुनाव के लिए हमारी वरीयताओं को दर्शाती है, कि हम किन कारणों से कौन-सा तरीका चुनते हैं । जब हम किसी को जानने वाला अथवा ज्ञानी कहते हैं तो उसमें केवल विवरण देना भर नहीं होता। उसमें हमारे द्वारा किया गया आकलन और हमारी स्वीकृति भी शामिल होती है। इसलिए शिक्षा का काम केवल उन बातों को बच्चों तक पहुँचाना नहीं हैं जो हम पहले से जानते हैं, बल्कि जानने के हमारे तरीके उन्हें बताना भी है। अर्थात शिक्षा का काम यह भी है कि बच्चों तक उन मानदण्डों को पंहुचायें जिनके सहारे हम किसी काम को करने में महारत का आकलन करते हैं; अन्वेषणों और बौद्धिक समालोचनाओं (की गुणवत्ता) का आकलन करते हैं ।

आखिर में ज्ञान होने की संकल्पना विद्याओं के भंडार अथवा विभिन्न प्रकार के अनुभवों का विवरण मात्र नहीं है। यह हमारे उन आदर्शों, अभिरूचियों और मापदण्डों को दर्शाती है जो बौद्धिक कलाओं के दायरे और समुचित उपयोग के तरीकों को परिभाषित करते हैं। उदाहरण के लिए यह हमारी सत्य और प्रमाण की धारणाओं को दर्शाती है । साथ ही 'ज्ञान होने की संकल्पना' किसी विश्वास के सत्य होने की संभावनाओं के हमारे आकलन को दर्शाती है, कि हम उसे किस हद तक सच मानते हैं।

इसमें कोई हैरानी वाली बात नहीं है कि ज्ञान की विभिन्न धारणाओं ने विभिन्न (विविध) किस्म की संपूर्ण दार्शनिक व्याख्याओं वाली परम्पराओं को जन्म दिया। क्योंकि न सिर्फ ज्ञान की धारणा का विस्तार और दायरा इतना बड़ा है कि इसमें कई वैकल्पिक धारणाओं के लिए जगह है, बल्कि इस धारणा का सभ्य जीवन के विविध आदर्शों, बदलती तकनीक और वैज्ञानिक मॉडल के साथ जो मूल संबंध है, वह भी विविध आकलनों को आमन्त्रित करता है। उदाहरण के लिए यहां हम ज्ञान के बारे में तीन दार्शनिक नजरियों की मोटी रूपरेखा देंगे : बुद्धिवादी (रेशनलिस्टिक), अनुभववादी (एम्परिसिस्ट) और परिणामवादी (प्रैगमेटिक)।[1]

बुद्धिवादी परंपरा (रेशनलस्टिक ट्रेडिसन) ने गणित को एक आदर्श विज्ञान माना है। गणितीय सत्य व्यापक और अनिवार्य होते हैं। इनकी स्थापना हम कुछ स्वयं सिद्ध मूल सत्यों के आधार पर निगमात्मक कड़ियां बनाते हुए कर सकते हैं। क्रम-बद्ध उपपत्ति इन कड़ियों को जाड़ने में मदद करती है और अत:प्रज्ञा मूल सत्यों का उद्घाटन करती है। अत: प्रज्ञा उपपत्ति की प्रत्येक कड़ी की गारंटी भी देती है । जो भी गणितीय सत्य को समझता है वह यह भी समझता है कि ये सत्य अनिवार्य है और प्राकृतिक तथ्यों पर निर्भर नहीं करते।

किसी रेखागणितीय प्रमेय को दर्शाने के लिए हम चित्रों का इस्तेमाल तो कर सकते हैं परंतु हम उसे प्रमेय का प्रमाण नहीं मान सकते। अगर मापने पर चित्र उन संबंधों को न दर्शाये जिनका कि प्रमेय में दावा किया गया हो, तो हम इस आधार पर सिद्धांत को गलत नहीं ठहरा सकते। बल्कि हम यह मानेंगें कि चित्र तो प्रमेय में अभिव्यक्त सत्य का केवल एक उदाहरण मात्र है, या कि उसकी तरफ केवल एक इशारा भर करता है। भौतिक बिन्दु का एक आकार होता है (उसमें फैलाव होता है) और भौतिक रेखा में मोटाई होती है, परंतु गणितीय बिन्दु और रेखा भौतिक नहीं, एक आदर्श हैं (विचार मात्र है)। इन्हें हम समझ तो सकते हैं लेकिन भौतिक संसार में इनके सचमुच के उदाहरण नहीं दे सकते। भौतिक वस्तुएं आदर्श गणितीय धारणाओं के केवल कम या ज्यादा निकट आ सकती हैं। और ये जितना आदर्श के निकट आती हैं हम उन्हें केवल उतना ही समझ सकते हैं। ऐसे कथन जो प्राकृतिक वस्तुओं का वर्णन ही करते हैं स्वभावत: 'कमोबेश सही' होते हैं । वे 'अनिवार्य सत्य' नहीं बल्कि 'परिस्थितिक सत्य' भर होते हैं। उनकी सच्चाई विशिष्ठ अवलोकनों के साक्ष्य पर निर्भर होती है और इन्हें अनुभव के आधार पर गलत ठहराया जा सकता हैं।

गणितीय सत्य अनुभव पर आश्रित नहीं होते, हालांकि अनुभवों से हमें इनका कुछ अहसास (या आभास) हो सकता है। गणितज्ञों को प्रयोगशाला की जरूरत नहीं होती, न वे सर्वेक्षण करते हैं और न आँकड़े इकट्ठे करते हैं। उनका काम तो केवल कलम और कागज से चल जाता है और इसी तरह वे सबसे ज्यादा स्थायी सत्यों तक पहुंचते हैं, ऐसे सत्य जो अनुभव द्वारा गलत सिद्ध नहीं किये जा सकते। प्लेटो के संवाद मैनो में गणितीय ज्ञान की इसी प्रकृति का उदाहरण है। उक्त संवाद में एक अनपढ़ दास बालक को इस रेखागणितीय सत्य की स्वीकृति तक पहुंचाया जाता है कि

'किसी वर्ग का दुगुना वर्ग उसके विकर्ण पर बना वर्ग होता है' । बालक को इस सत्य की स्वीकृति (और दर्शन) तक एक गणितीय आकृति के इर्द-गिर्द सुचयनित सवालों की कड़ियों द्वारा पंहुचाया जाता है। ऐसे उदाहरणों के आधार पर प्लेटो कहते हैं कि असली ज्ञान का स्रोत हमारे अंदर है और यह कि इस ज्ञान की अभिव्यक्ति संभव है । हमें तो केवल सही सवालों द्वारा दिमाग का ध्यान उस ज्ञान की ओर केंद्रित करने की जरूरत है जो उसके पास पहले से ही मौजूद है ।[2] प्लेटो के लिए आदर्श शिक्षा वह गणितीय शिक्षा है जिसमें अनिवार्य सत्यों के आदर्श रूप का बोध होता है। जो शिक्षार्थी को यह सामर्थ्य देती है कि वह प्राकृतिक जगत को आदर्श सत्यों के निकट (पर पूर्णत: हूबहू नहीं) मूर्तरूप की तरह समझ सके।

परिणामवादी नजरिये से देखें तो गणितीय ज्ञान तार्किक ज्ञान का ही एक स्वरूप है। यह वो उपयोगी यंत्र है जो हमारी परिकल्पनाओं के निहितार्थों का विस्तार करने में हमारी मदद करता है। यह हमारी परिकल्पनाओं और प्रयोगात्मक परिणामों के संबंधों को दर्शाता है और परिकल्पनाओं के आपसी रिश्ते के बारे में भी बताता है। गणित अपने आप संसार के बारे में सीधा–सीधा कुछ नहीं बताता, यह तो खोज का वो नियंत्रक औजार है जो हमारे विचारों को व्यवस्थित करता है और निहितार्थ देखने में मदद करता है।

अनुभववादी परम्परा में प्राकृतिक विज्ञान को बुनियादी आदर्श (मॉडल) माना जाता है। प्राकृतिक आभासों का ज्ञान अनुभव द्वारा ही होता है इसमें अत:- प्रज्ञा की कोई भूमिका नहीं होती। और न ही हम स्वयं-सिद्ध सत्यों (एक्जिओम्स) के आधार पर प्राकृतिक घटनाओं के आपसी रिश्तों को समझ सकते हैं। जो जन्म से अन्धा है, वह पूर्ण रूप से तार्किक तो हो सकता है, पर वह कभी हरे रंग की कल्पना नहीं कर सकता और न ही उसे कभी इस रंग का बौद्धिक आभास हो सकता है। रंग का या किसी प्राकृतिक तथ्य का तत्वीय अंश पहले से दिमाग में नहीं होता जिसे आप आत्मविश्लेषण द्वारा प्राप्त कर सकें। इन्हें तो केवल अनुभव के दौरान अवलोकन से ही समझा जा सकता है। इस के अलावा मूल परिघटनाओं के बीच के अंतरसंबन्धों-उनके विविध वर्गों का बनना एवं पूर्वापर संबंधों की कड़ियों - तक हम स्वयं-सिद्ध मूल सत्यों को लेकर तर्क द्वारा नहीं पहुँच सकते । ये तो हमारे सीमित पूर्व अनुभव के आधार पर बने स्वाभाविक संबंध हैं, जो प्रारंम्भिक कामचलाऊ सामान्यीकरण माने जा सकते हैं। लॉक के शब्दों में जन्म के समय दिमाग एक खाली स्लेट होता है और प्राकृतिक मूल धारणाओं और उनके अंतर-संबंधों को समझने के लिए पूर्ण रूप से अनुभव पर आश्रित है।

इस परंपरा में दिमाग को ऐसा मानना पड़ेगा कि उसमें तुलना करने की, विश्लेषण की, संश्लेषण की और अनुभव द्वारा प्रदत्त सामग्री के आधार पर सामान्यीकरण करने के साथ-साथ अवधारणाओं पर तार्किक संक्रियाएं करने की क्षमता होना लाजमी हो। अनुभववादी परंपरा में गणित को अवधारणाओं के अंदरूनी तार्किक रिश्तों को दर्शाने वाला ज्ञान, या बहुत ही अमूर्त पर फिर भी अंतत: अनुभव पर आधारित सामान्यीकरण को दर्शाने वाला ज्ञान माना जा सकता है। हर हाल में वह सारा ज्ञान जो दिमाग के अपने ही वैचारिक दायरों से पार का है, और संसार के बारे में है, उस ज्ञान का आधार उस सब का अवलोकन ही हो सकता है जो बाहर है और जो दिमाग में ही अन्तर्जात नहीं है (हमारे भीतर मौजूद नहीं है)। अनुभवादी नजरिये से देखें तो आदर्श शिक्षा वह होगी जो शिक्षार्थी को प्रकृति का भरपूर एवं यथोचित रूप से व्यवस्थित अनुभव दे । ताकि उसकी अवलोकन करने की और तथ्यों में संबध देखने की क्षमता विकसित हो और वह घटनाओं के स्वाभाविक क्रम को पकड़ सके। इसके साथ ही अनुभववादी परंपरा की आदर्श शिक्षा शिक्षार्थी को उन तार्किक आदतों और तरीकों में प्रशिक्षित करती है जो अनुभव से सीखने में मदद करते हैं ; जैसे कि सही और सटीक अवलोकन करना, उचित सामान्यीकरण करना और उन प्रस्तावित नियमों को बदलने या छोड़ने की तैयारी जो कि होने वाली घटनाओं के बारे में पूर्वानुमान लगाने में असफल रहते हैं।

परिणामवादी दृष्टिकोण (प्रैगमेटिक व्यू) प्राकृतिक विज्ञान के प्रायोगिक स्वरूप पर जोर देता है, खासतौर पर प्रयोग के क्रियाशील पहलुओं पर। संसार के बारे में कुछ भी महत्त्वपूर्ण जानने के लिए हमें स्वयंसिद्ध बातों के आधार पर तर्क करने के अलावा और भी कुछ करना होगा; और अपने पूर्व अनुभवों के आधार पर किए विवेकशील सामान्यीकरणों से भी आगे जाना पड़ेगा। प्रयोग करने में परिवेश का सक्रिय बदलाव सम्मिलित होता है, और इस बदलाव की दिशा उस वक्त की समस्याओं से रू-ब-रू होने में तथा उन्हें हल करने के लिए प्रस्तावित अग्रणी विचारों से तय होती है।

समस्या प्रायोगिक खोज का अवसर पैदा करती है और उस खोज को एक टिकाऊ केन्द्र प्रदान करती है । खोज के लिए

आरंभिक सवाल सुझाती है; समस्या खोज की प्रासांगिकता के मानदण्ड तय करती है और उसकी सफलता की परिभाषा भी देती है । समस्या पर चिंतन करते हुए कुछ प्रारम्भिक विचार उत्पन्न होते हैं। यह जरूरी नहीं होता कि ये विचार हमारे पूर्व अनुभव का ही प्रतिबिंब हों, पर ये ऐसे विचार हों जो प्रस्तुत प्रश्नों पर केन्द्रित हों तथा प्रासांगिक जवाब तलाशने में समर्थ हों । हमारे ये प्रारम्भिक विचार या परिकल्पनायें कर्म के दौरान परखी जाती हैं। प्रयोगकर्ता इन्हें साधन बना कर प्रकृति पर नियंत्रित कार्रवाई करता है। ऐसा करते हुए अक्सर पाता है कि सभी परिकल्पनायें समान रूप से प्रभावी नहीं होतीं । कुछ उम्मीद तो बंधाती हैं पर प्रयोग करने पर खरी नहीं उतरतीं। वहीं कुछ ऐसी भी होतीं हैं जो प्रकृति के व्यवहार का एकदम सही अनुमान लगाती हैं। ड्यूवी[3] के अनुसार यह 'प्रयास द्वारा जांचने' और परिणाम भुगतने की प्रक्रिया है । अर्थात एक विचार के अनुसार कर्म करके उसे परखना और इस प्रयास के परिणामों को भुगत कर उनसे सीखना ।

परिणामवादी नजरिये से देखें तो गणितीय ज्ञान तार्किक ज्ञान का ही एक स्वरूप है। यह वो उपयोगी यंत्र है जो हमारी परिकल्पनाओं के निहितार्थों का विस्तार करने में हमारी मदद करता है। यह हमारी परिकल्पनाओं और प्रयोगात्मक परिणामों के संबंधों को दर्शाता है और परिकल्पनाओं के आपसी रिश्ते के बारे में भी बताता है। गणित अपने आप संसार के बारे में सीधा-सीधा कुछ नहीं बताता, यह तो खोज का वो नियंत्रक औजार है जो हमारे विचारों को व्यवस्थित करता है और निहितार्थ देखने में मदद करता है। खोज अपने आप में एक कर्म है, एक ऐसा कर्म जो तर्क द्वारा नियंत्रित है, सिद्धांत द्वारा उद्वेलित है और उन व्यवहारिक समस्याओं का उत्तर देने में सक्षम है जो हमें खोज के लिए प्रेरित करतीं हैं।

परिणामवादी के लिए अनुभव से सीखना एक सक्रिय प्रक्रिया है। परिणामवादी परंपरा में दिमाग को न तो ध्रुव-सत्यों के अथाह खजाने के रूप में देखा जाता है, और न ही कोरे कागज के रूप में जिस पर अनुभव से लिखा जाना है । दिमाग तो प्राणी के पास मौजूद उस क्षमता का नाम माना जाता है जो परिवेश की समस्याएं हल करने के लिए सक्रिय होती है, इसका काम ऐसे विचारों को जन्म देना है जिनकी मदद से ही प्रकृति द्वारा प्राणी के सामने प्रस्तुत समस्याओं का हल खोजा जाता है। आदर्श शिक्षा वो है जो सामान्य विचारों के व्यावहारिक उपयोग पर बल दे और वास्तविक समस्याओं का हल खोजने में मदद करे। यह शिक्षा शिक्षार्थी को नये सिद्धांतों का सृजन करने के लिए प्रोत्साहित तो करती है पर साथ ही इस बात पर भी बल देती है कि कल्पना द्वारा निर्मित इन सिद्धांतों का नियंत्रण सक्रिय प्रयोगों के परिणामों से हो। ◆

नोट्स

1. तीनों नजरिये वैसे तो कई लोगों के विचारों से संग्रहित हैं, पर हर नजरिये से कुछ नामों को जोड़ना मददगार हो सकता है ।

   बुद्धिवाद के साथ हम ये नाम जोड़ सकते हैं : प्लेटो, देकार्त और लिबनीज। अनुभववाद के साथ जुड़े कुछ नाम: लॉक, बर्कले और हयूम। परिणामवाद के साथ जुड़े कुछ नाम: पर्स, जेम्स और ड्यूवी ।

2. संक्षेप में, चल रही बात को इस आकृति द्वारा समझाया जा सकता है :

   बच्चों के लिये समस्या दी गई है कि कौन से वर्ग का क्षेत्रफल छायांकित (शेडेड) वर्ग के क्षेत्रफल से दुगना है ? लड़के को इस बात तक कुछ इस प्रकार से पहुंचाया जाता है :

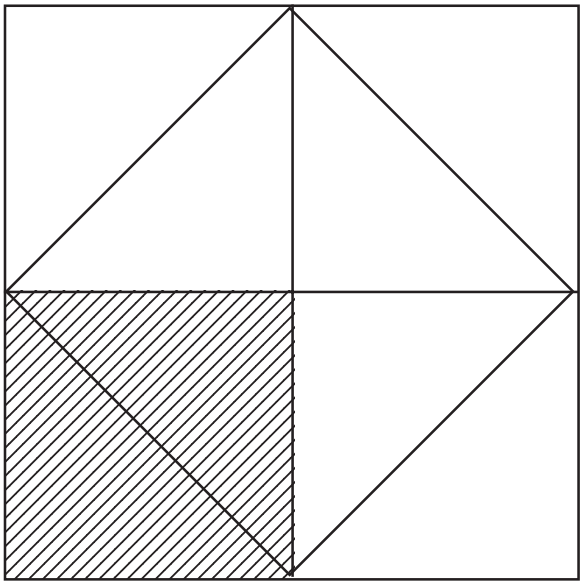

   छायांकित वर्ग की भुजा दुगनी करने से एक बड़ा वर्ग बनता है जिसका क्षेत्रफल छायांकित वर्ग से चार गुणा होता है। इस बड़े वर्ग में 4 छोटे वर्ग हैं और हर छोटे वर्ग का विकर्ण उस वर्ग को आधे में बांटता है। इन आधे-आधे हिस्सों को जोड़ने पर हम पाते हैं कि विकर्णों द्वारा बने वर्ग का क्षेत्रफल छायांकित वर्ग से दुगना है।

3. जॉन ड्यूवी, डेमोक्रेसी एण्ड एज्युकेशन; न्यूयॉर्क : द मैकमिलन कम्पनी, 1916, पेपर बैक संस्करण, 1961 पृष्ठ 139.